नईदुनिया

संपादकीय

चंदे की राजनीति और डमी दलों का खेल: लोकतंत्र पर बोझ बनती फर्जी पार्टियाँ

भारतीय लोकतंत्र में राजनीतिक दलों को लोकतांत्रिक व्यवस्था की रीढ़ माना जाता है। लेकिन जब यही दल पारदर्शिता और जवाबदेही से दूर होकर चंदे की राजनीति को धंधा बना लें, तब लोकतंत्र की आत्मा पर ही सवाल खड़े हो जाते हैं। हाल के वर्षों में सामने आए आंकड़े इस चिंता को और गहरा करते हैं। कई छोटे और तथाकथित राजनीतिक दलों ने करोड़ों रुपये का चंदा तो लिया, लेकिन उसे खर्च करने के नाम पर ऐसे-ऐसे दावे किए जो हकीकत से कोसों दूर दिखाई देते हैं। चार वर्षों में लगभग दस दलों ने करीब 255 करोड़ रुपये का चंदा लिया और चुनाव प्रचार, कार्यालय संचालन, रैली, झंडा-बैनर जैसे मदों में 252 करोड़ रुपये खर्च दिखा दिए। सवाल यह है कि आखिर यह पैसा वास्तव में गया कहां? क्या लोकतंत्र में सिर्फ कागजों पर हिसाब दिखा देना ही जवाबदेही है?

सबसे चौंकाने वाला उदाहरण भारतीय गरीब विकास कल्याण पार्टी का है। इस दल ने पिछले लोकसभा चुनाव में केवल एक उम्मीदवार उतारा, जिसकी जमानत तक जब्त हो गई। इसके बावजूद पार्टी ने अपने कार्यालय के खर्च के नाम पर 5 करोड़ रुपये खर्च दिखाए, जबकि वास्तविकता यह है कि उसका कार्यालय मात्र चार हजार रुपये महीने के किराए की दुकान में चल रहा है। यह अंतर सिर्फ आंकड़ों का नहीं, बल्कि व्यवस्था के साथ खिलवाड़ का है। इसी तरह कई दलों ने चुनाव लड़े बिना ही करोड़ों रुपये खर्च दिखा दिए। लोक सेवक पार्टी ने बिना चुनाव लड़े 4.40 करोड़ रुपये खर्च करने का दावा किया। वहीं आत्मनिर्भर पार्टी ने भी बिना प्रत्याशी उतारे खर्च का लंबा-चौड़ा हिसाब प्रस्तुत कर दिया। यह स्थिति बताती है कि कुछ दल चुनाव लड़ने के लिए नहीं, बल्कि चंदा जुटाने के लिए बनाए गए हैं।

और तो और, कुछ दलों ने मीडिया विज्ञापन पर भी अविश्वसनीय खर्च का दावा किया है। उदाहरण के तौर पर एक दल ने लोकसभा चुनाव में 18.5 करोड़ रुपये मीडिया विज्ञापन पर खर्च करने की बात कही। जबकि दूसरी ओर बड़े दलों के वास्तविक खर्च का रिकॉर्ड देखें, तो कई बार इतने बड़े आंकड़े नहीं मिलते। उदाहरण के लिए भाजपा ने प्रदेश में 25 लोकसभा सीटों पर चुनाव प्रचार के लिए लगभग 4.74 करोड़ रुपये खर्च किए थे। जब राष्ट्रीय स्तर की पार्टी का खर्च इतना सीमित हो सकता है, तो एक छोटे और लगभग निष्क्रिय दल का खर्च करोड़ों में कैसे पहुंच जाता है? असल समस्या यह है कि ऐसे कई राजनीतिक दल सिर्फ कागजों पर सक्रिय हैं। उनके पास न संगठन है, न जनाधार, न ही चुनावी गतिविधियां। फिर भी वे उद्योगपतियों, व्यापारियों और आम जनता से राजनीतिक चंदा लेने में पीछे नहीं रहते। बाद में यही पैसा झंडा-बैनर, रैली, सभा और कार्यालय खर्च के नाम पर कागजों में समेट दिया जाता है। यह स्थिति लोकतंत्र के लिए बेहद खतरनाक है। जब राजनीतिक दल ही पारदर्शिता से दूर भागेंगे, तो जनता का भरोसा कैसे कायम रहेगा? लोकतंत्र में राजनीतिक दलों को चंदा लेने का अधिकार है, लेकिन इसके साथ ही हर पैसे का पारदर्शी और प्रमाणित हिसाब देना भी उनकी जिम्मेदारी है।

इस पूरे मामले में निर्वाचन आयोग की भूमिका भी महत्वपूर्ण हो जाती है। केवल कागजी ऑडिट या औपचारिक रिपोर्ट से काम नहीं चलेगा। आयोग को ऐसे दलों के वित्तीय लेन-देन की सख्त और सतत निगरानी करनी होगी। जिन दलों के पास न कार्यकर्ता हैं, न संगठन और न ही चुनावी भागीदारी, उनके करोड़ों रुपये के खर्च के दावों की जमीनी जांच आवश्यक है।

आजकल

बुनियादी सुविधाओं का सवाल

प्रदेश की राजधानी भोपाल में नगर निगम द्वारा प्रॉपर्टी टैक्स और जलकर में लगभग 10 प्रतिशत तक बढ़ोतरी के प्रस्ताव की चर्चा ने आम नागरिकों के बीच चिंता बढ़ा दी है। बताया जा रहा है कि यह प्रस्ताव 23 मार्च को होने वाली बैठक में रखा जा सकता है। ऐसे समय में, जब शहर के कई इलाकों में मूलभूत सुविधाओं की स्थिति संतोषजनक नहीं है, तब टैक्स बढ़ाने की संभावना नागरिकों के लिए एक बड़ा सवाल खड़ा कर रही है।

वास्तविकता यह है कि शहर के अनेक मोहल्लों में सड़कों की हालत खराब है। जगह-जगह गड्ढे हैं, नालियां खुले में बह रही हैं और कचरे के बड़े-बड़े ढेर आम दृश्य बन चुके हैं। कई क्षेत्रों में स्ट्रीट डॉग और आवारा पशुओं की समस्या भी लगातार बढ़ रही है। रात के समय कई गलियां अंधेरे में डूबी रहती हैं, जिससे सुरक्षा और आवागमन दोनों प्रभावित होते हैं। इन परिस्थितियों में नागरिक यह सवाल उठाने लगे हैं कि जब बुनियादी व्यवस्थाएं ही संतोषजनक नहीं हैं, तो फिर टैक्स बढ़ाने का औचित्य क्या है।

नगर निगम का तर्क अक्सर यह होता है कि शहर के विकास, सफाई व्यवस्था, सड़क निर्माण और जलापूर्ति जैसी सेवाओं को बेहतर बनाने के लिए अतिरिक्त संसाधनों की आवश्यकता होती है। लेकिन समस्या यह है कि आम जनता को इन सेवाओं की गुणवत्ता में अपेक्षित सुधार दिखाई नहीं देता। यही कारण है कि टैक्स वृद्धि का प्रस्ताव लोगों के बीच असंतोष का कारण बन रहा है। लोकतांत्रिक व्यवस्था में कर देना नागरिक का दायित्व है, लेकिन उसी के साथ बेहतर सुविधाएं उपलब्ध कराना स्थानीय प्रशासन की जिम्मेदारी भी है। यदि नगर निगम कर बढ़ाने की योजना बना रहा है, तो उसे यह भी स्पष्ट करना चाहिए कि अतिरिक्त राजस्व का उपयोग किस प्रकार किया जाएगा और उससे शहर की समस्याओं का समाधान कैसे होगा। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि पारदर्शिता और जवाबदेही के बिना किसी भी कर वृद्धि को स्वीकार करना नागरिकों के लिए कठिन हो जाता है। इसलिए आवश्यक है कि नगर निगम पहले शहर की मूलभूत समस्याओं—सफाई, सड़क, प्रकाश व्यवस्था, जल निकासी और पशु नियंत्रण—पर ठोस सुधार दिखाए। तभी टैक्स देने वाली आम जनता को यह भरोसा मिलेगा कि उनका पैसा वास्तव में शहर के विकास और उनकी सुविधाओं पर खर्च हो रहा है।

उत्तर प्रदेश में निरंतर बढ़ रहा धार्मिक पर्यटन

डॉ. शैलेश शुक्ला

उत्तरप्रदेश में धार्मिक पर्यटन का जो व्यापक विस्तार पिछले कुछ वर्षों में देखने को मिला है, वह अब 17 मार्च 2026 तक की स्थिति में एक स्पष्ट, प्रमाणित और निरंतर बढ़ती हुई प्रवृत्ति के रूप में स्थापित हो चुका है। भारत सरकार के पर्यटन मंत्रालय द्वारा जारी आँकड़ों के आधार पर विभिन्न विश्वसनीय रिपोर्टों में यह दर्ज किया गया है कि वर्ष 2025 में उत्तर प्रदेश में 137 करोड़ से अधिक घरेलू पर्यटक आए, जिससे यह राज्य देश में पर्यटन के मामले में प्रथम स्थान पर रहा, जबकि लगभग 3.66 लाख विदेशी पर्यटकों ने भी यहाँ की यात्रा की, जैसा कि पर्यटन मंत्रालय के आधिकारिक आँकड़ों पर आधारित रिपोर्टों में उल्लेखित है। इस विशाल संख्या का बड़ा भाग धार्मिक पर्यटन से संबंधित है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि उत्तर प्रदेश की बढ़ती पर्यटन पहचान मुख्य रूप से आस्था-आधारित यात्रा पर आधारित है।

यदि इस प्रवृत्ति को और गहराई से समझें तो अयोध्या इसका सबसे सशक्त उदाहरण बनकर सामने आई है। उत्तर प्रदेश सरकार के आधिकारिक वक्तव्यों के अनुसार वर्ष 2025 में केवल जनवरी से जून के बीच ही लगभग 23 करोड़ श्रद्धालुओं ने अयोध्या का दौरा किया, जो पूर्व वर्षों की तुलना में चार से पाँच गुना अधिक वृद्धि को दर्शाता है। इसी प्रकार यात्रा और पर्यटन क्षेत्र की रिपोर्टों में यह भी दर्ज किया गया है कि वर्ष 2025 की पहली तिमाही, यानी जनवरी से मार्च के बीच ही अयोध्या में 20.36 करोड़ से अधिक श्रद्धालु पहुँचे, जो किसी एक धार्मिक शहर के लिए अभूतपूर्व आँकड़ा है। इसके अतिरिक्त, वर्ष 2024 में राम मंदिर के उद्घाटन के बाद जनवरी से सितंबर के बीच 13.55 करोड़ से अधिक घरेलू पर्यटक अयोध्या पहुँचे और इसमें लगभग 70 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई, जैसा कि प्रतिष्ठित मीडिया रिपोर्टों में वर्णित है। फरवरी 2026 में प्रकाशित एक अध्ययन में यह भी उल्लेख किया गया कि केवल छह महीनों में 11 करोड़ से अधिक श्रद्धालुओं ने राम मंदिर के दर्शन किए, जिससे स्थानीय अर्थव्यवस्था में कई गुना वृद्धि हुई। ये सभी तथ्य इस बात को प्रमाणित करते हैं कि अयोध्या अब न केवल भारत बल्कि विश्व के प्रमुख धार्मिक पर्यटन केंद्रों में शामिल हो चुकी है।

प्रयागराज का महाकुंभ 2025 इस बढ़ते धार्मिक पर्यटन का एक और अत्यंत महत्वपूर्ण उदाहरण है। विभिन्न आधिकारिक और विश्लेषणात्मक रिपोर्टों में यह दर्ज किया गया है कि इस आयोजन में 66 करोड़ से अधिक श्रद्धालुओं ने भाग लिया, जिससे यह विश्व का सबसे बड़ा धार्मिक आयोजन बन गया। यह संख्या केवल आस्था की अभिव्यक्ति नहीं है, बल्कि यह उत्तर प्रदेश की पर्यटन क्षमता, प्रशासनिक प्रबंधन और धार्मिक आकर्षण की व्यापकता को भी दर्शाती है। महाकुंभ के दौरान प्रतिदिन लाखों लोगों की उपस्थिति और देश-विदेश से आने वाले श्रद्धालुओं की भागीदारी इस तथ्य को पुष्ट करती है कि धार्मिक पर्यटन अब वैश्विक स्वरूप ग्रहण कर चुका है।

इसी प्रकार ब्रज क्षेत्र, विशेषकर मथुरा-वृंदावन में भी धार्मिक पर्यटन का विस्तार निरंतर बढ़ रहा है। मार्च 2026 में प्रकाशित एक समाचार रिपोर्ट में उल्लेख किया गया कि ब्रज क्षेत्र में आयोजित रंगोत्सव और होली समारोहों में 44 लाख से अधिक लोगों ने भाग लिया, जो इस क्षेत्र की बढ़ती लोकप्रियता और धार्मिक-सांस्कृतिक आकर्षण को स्पष्ट करता है। उसी रिपोर्ट में यह भी बताया गया कि वर्ष 2025 में मथुरा क्षेत्र में लगभग 10.24 करोड़ पर्यटक पहुँचे, जो पिछले तीन वर्षों की तुलना में लगभग 57 प्रतिशत की वृद्धि दर्शाता है। यह तथ्य इस बात का संकेत है कि धार्मिक पर्यटन अब केवल मंदिर दर्शन तक सीमित नहीं है, बल्कि यह उत्सव, संस्कृति और अनुभव-आधारित यात्रा का भी रूप ले चुका है।

वाराणसी, जिसे काशी के नाम से भी जाना जाता है, इस पूरे परिदृश्य का एक स्थायी केंद्र बना हुआ है। ऐतिहासिक और धार्मिक महत्व के साथ-साथ काशी विश्वनाथ धाम परियोजना के विकास के बाद यहाँ पर्यटकों की संख्या में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। विभिन्न सरकारी और शोध रिपोर्टों में यह दर्ज किया गया है कि पिछले कुछ वर्षों में वाराणसी में आने वाले पर्यटकों की संख्या करोड़ों में पहुँच चुकी है और यह शहर धार्मिक पर्यटन के साथ-साथ सांस्कृतिक पर्यटन का भी प्रमुख केंद्र बन गया है।

धार्मिक पर्यटन के इस तीव्र विस्तार के पीछे राज्य सरकार द्वारा किए गए बुनियादी ढाँचे के विकास की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। वर्ष 2026-27 के बजट में उत्तर प्रदेश सरकार ने पर्यटन स्थलों के विकास के लिए 500 करोड़ रुपये से अधिक का प्रावधान किया है, जबकि केवल अयोध्या के लिए ही 150 करोड़ रुपये का विशेष प्रावधान किया गया है, जैसा कि आधिकारिक बजट रिपोर्टों में उल्लेखित है। इसके अतिरिक्त नैमिषारण्य, मथुरा, विंध्याचल और अन्य धार्मिक स्थलों के विकास के लिए भी अलग-अलग योजनाएँ बनाई गई हैं। यह निवेश स्पष्ट रूप से यह दर्शाता है कि राज्य सरकार धार्मिक पर्यटन को एक दीर्घकालिक आर्थिक और सांस्कृतिक रणनीति के रूप में विकसित कर रही है।

इसके साथ ही पर्यटन से जुड़ी आर्थिक गतिविधियों में भी उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। विभिन्न अध्ययन और रिपोर्टों में यह बताया गया है कि अयोध्या जैसे शहरों में धार्मिक पर्यटन के कारण व्यापार, होटल उद्योग, परिवहन और रियल एस्टेट क्षेत्र में भारी वृद्धि हुई है। उदाहरण के लिए, फरवरी 2026 की एक अध्ययन रिपोर्ट में यह उल्लेख किया गया कि राम मंदिर के निर्माण के बाद स्थानीय व्यापारियों की आय कई गुना बढ़ गई और संपत्ति के दामों में 25 से 40 प्रतिशत तक की वृद्धि दर्ज की गई। इससे स्पष्ट होता है कि धार्मिक पर्यटन केवल सांस्कृतिक गतिविधि नहीं, बल्कि आर्थिक विकास का भी प्रमुख माध्यम बन चुका है।

हालांकि इस तीव्र वृद्धि के साथ कई चुनौतियाँ भी सामने आई हैं। बढ़ती भीड़ के कारण यातायात, स्वच्छता और सुरक्षा जैसी समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं। मार्च 2026 में राज्य सरकार द्वारा आयोजित समीक्षा बैठकों में यह निर्देश दिया गया कि अयोध्या, मिर्जापुर और अन्य प्रमुख तीर्थ स्थलों पर भीड़ प्रबंधन, स्वच्छता और सुरक्षा के लिए विशेष व्यवस्था की जाए, जिससे यह स्पष्ट होता है कि प्रशासन भी इस चुनौती को गंभीरता से ले रहा है। इसी प्रकार बड़े आयोजनों और त्योहारों के दौरान विशेष निगरानी और व्यवस्थाओं की आवश्यकता भी लगातार बढ़ रही है।

इसके अतिरिक्त पर्यावरणीय संतुलन और सांस्कृतिक संरक्षण भी एक महत्वपूर्ण चिंता का विषय बनकर उभर रहे हैं। अत्यधिक पर्यटक दबाव के कारण नदी, घाट और ऐतिहासिक स्थलों पर प्रभाव पड़ने की संभावना बढ़ जाती है। इसलिए आवश्यक है कि विकास के साथ-साथ संरक्षण की नीतियों को भी समान महत्व दिया जाए। सरकार द्वारा इको-टूरिज्म और सतत पर्यटन के लिए किए जा रहे प्रयास इस दिशा में सकारात्मक संकेत देते हैं।

निष्कर्षत: यह स्पष्ट है कि उत्तर प्रदेश में धार्मिक पर्यटन का निरंतर बढ़ना एक गहरे सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक परिवर्तन का संकेत है। अयोध्या, प्रयागराज, वाराणसी और मथुरा जैसे केंद्र न केवल आस्था के प्रतीक हैं, बल्कि वे राज्य की अर्थव्यवस्था और वैश्विक पहचान के भी प्रमुख आधार बन चुके हैं। उपलब्ध प्रामाणिक आँकड़े और विश्वसनीय रिपोर्टें यह सिद्ध करती हैं कि यह वृद्धि अस्थायी नहीं, बल्कि एक स्थायी प्रवृत्ति है। यदि इस विकास को सुव्यवस्थित योजना, पर्यावरणीय संतुलन और सांस्कृतिक संवेदनशीलता के साथ आगे बढ़ाया जाए, तो उत्तर प्रदेश आने वाले वर्षों में विश्व का सबसे महत्वपूर्ण धार्मिक पर्यटन केंद्र बन सकता है।

ट्रंप की जंग में घटता साथ : नाटो की दूरी से थमेगा ईरान संकट?

वैश्विक राजनीति में युद्ध और कूटनीति हमेशा एक-दूसरे के समानांतर चलते हैं। हाल के दिनों में अमेरिका और ईरान के बीच बढ़ते तनाव ने एक बार फिर दुनिया को संभावित बड़े संघर्ष की आशंका में डाल दिया है। इस पूरे घटनाक्रम में सबसे दिलचस्प पहलू यह है कि अमेरिका के राष्ट्रपति ट्रंप को इस मुद्दे पर अपने पारंपरिक सहयोगियों का पूरा समर्थन मिलता हुआ नहीं दिखाई दे रहा है। कई यूरोपीय देशों और सहयोगी राष्ट्रों ने सीधे या अप्रत्यक्ष रूप से इस युद्ध में शामिल होने से इनकार कर दिया है। इससे यह प्रश्न उठने लगा है कि क्या अमेरिका इस संघर्ष में वास्तव में अकेला पड़ रहा है और क्या इससे युद्ध की संभावना कम हो सकती है।

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद बने सैन्य गठबंधन नाटो को पश्चिमी देशों की सामूहिक सुरक्षा का आधार माना जाता है। सामान्यत: अमेरिका की सैन्य रणनीतियों में नाटो देशों का सहयोग महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। लेकिन ईरान के साथ संभावित युद्ध को लेकर कई प्रमुख यूरोपीय देशों ने स्पष्ट संकेत दिए हैं कि वे सीधे सैन्य कार्रवाई का हिस्सा नहीं बनना चाहते। यूरोप के प्रमुख देश इटली, स्विट्जरलैंड और स्पेन पहले ही संकेत दे चुके हैं कि वे इस संघर्ष में सक्रिय सैन्य भूमिका निभाने के पक्ष में नहीं हैं। इसी प्रकार फ्रांस और जर्मनी ने भी सावधानी भरा रुख अपनाया है। जर्मनी के नेतृत्व ने स्पष्ट कहा कि यह नाटो का युद्ध नहीं है, इसलिए इसमें गठबंधन की सामूहिक भागीदारी आवश्यक नहीं मानी जानी चाहिए। यह रुख इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि यूरोप पहले से ही कई आर्थिक और सुरक्षा चुनौतियों का सामना कर रहा है। ऊर्जा संकट, महंगाई और क्षेत्रीय तनाव के बीच यूरोपीय देश किसी नए बड़े युद्ध में फंसने से बचना चाहते हैं।

अमेरिका का पारंपरिक सहयोगी यूनाइटेड किंगडम भी इस मामले में पूरी तरह आगे आता नहीं दिख रहा है। ब्रिटिश नेतृत्व ने संकेत दिया है कि वह किसी बड़े युद्ध गठबंधन का हिस्सा बनने में सावधानी बरतेगा। इसका अर्थ यह नहीं कि ब्रिटेन अमेरिका से दूरी बना रहा है, बल्कि वह स्थिति को कूटनीतिक तरीके से हल करने के पक्ष में अधिक दिखाई देता है। इसी तरह एशिया-प्रशांत क्षेत्र के अमेरिकी सहयोगी जापान और ऑस्ट्रेलिया ने भी सीधे युद्ध में शामिल होने के प्रति उत्साह नहीं दिखाया है। इन देशों के लिए क्षेत्रीय सुरक्षा और आर्थिक स्थिरता प्राथमिकता है, इसलिए वे किसी बड़े मध्य-पूर्वी संघर्ष में सीधे प्रवेश से बचना चाहते हैं।

इस पूरे घटनाक्रम में चीन ने भी दिलचस्प भूमिका निभाई है। बीजिंग ने कहा है कि पहले युद्ध की स्थिति को रोकने और तनाव कम करने पर ध्यान दिया जाना चाहिए, उसके बाद ही किसी सैन्य गतिविधि या नौसैनिक तैनाती की बात होनी चाहिए। यह बयान चीन की उस नीति को दर्शाता है, जिसमें वह खुद को वैश्विक शांति और मध्यस्थता की भूमिका में प्रस्तुत करना चाहता है। चीन का यह रुख अमेरिका की रणनीति के लिए चुनौती भी बन सकता है, क्योंकि यदि वैश्विक शक्तियां युद्ध के बजाय वार्ता पर जोर देती हैं तो अमेरिका पर भी दबाव बढ़ सकता है कि वह सैन्य कार्रवाई के बजाय कूटनीतिक समाधान तलाशे। राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने संकेत दिया है कि यदि सहयोगी देश अमेरिका की मदद नहीं करते तो यह नाटो के लिए अच्छा संकेत नहीं होगा। इसे कई विश्लेषक एक तरह की अप्रत्यक्ष चेतावनी या दबाव की रणनीति मानते हैं। ट्रंप पहले भी नाटो देशों से यह कहते रहे हैं कि उन्हें अपनी रक्षा पर अधिक खर्च करना चाहिए और अमेरिका पर निर्भरता कम करनी चाहिए। ऐसे में यदि नाटो देश इस युद्ध में भागीदारी से इनकार करते हैं तो इससे गठबंधन के भीतर राजनीतिक तनाव भी बढ़ सकता है। हालांकि कई विशेषज्ञों का मानना है कि नाटो एक दीर्घकालिक सुरक्षा ढांचा है और किसी एक संकट के कारण उसका अस्तित्व खतरे में नहीं पड़ेगा। फिर भी इस स्थिति ने गठबंधन के भीतर मतभेदों को जरूर उजागर कर दिया है। इस पूरे घटनाक्रम में भारत भी सावधानी के साथ स्थिति पर नजर बनाए हुए है। भारतीय नौसेना के जहाजों की गतिविधियों और समुद्री सुरक्षा के प्रयासों का उद्देश्य मुख्य रूप से व्यापारिक मार्गों और भारतीय नागरिकों की सुरक्षा सुनिश्चित करना है। मध्य-पूर्व भारत के लिए ऊर्जा और व्यापार का महत्वपूर्ण क्षेत्र है, इसलिए भारत किसी भी प्रकार की अस्थिरता से बचना चाहता है। साथ ही ईरान के साथ भारत के ऐतिहासिक और आर्थिक संबंध भी महत्वपूर्ण हैं। इसलिए भारत की कोशिश यही रहती है कि वह संतुलित कूटनीति अपनाते हुए सभी पक्षों के साथ संवाद बनाए रखे। यदि अधिकांश सहयोगी देश युद्ध में सक्रिय भागीदारी से इनकार करते हैं तो अमेरिका को सैन्य और राजनीतिक दोनों स्तरों पर कठिनाइयों का सामना करना पड़ सकता है। बड़े युद्धों में अंतरराष्ट्रीय समर्थन केवल सैन्य संसाधनों के लिए ही नहीं, बल्कि वैधता और वैश्विक समर्थन के लिए भी जरूरी होता है। अतीत में भी कई बार ऐसा हुआ है जब अमेरिका को किसी सैन्य कार्रवाई में सीमित सहयोग मिला। ऐसे मामलों में युद्ध लंबा खिंच सकता है और उसके आर्थिक व राजनीतिक परिणाम अधिक गंभीर हो सकते हैं।

दूसरी ओर, यह भी संभव है कि सहयोगियों की दूरी ही अंतत: युद्ध को रोकने में भूमिका निभाए। जब प्रमुख देश सैन्य कार्रवाई से बचने का संदेश देते हैं तो इससे कूटनीतिक बातचीत की संभावना बढ़ जाती है। यदि वैश्विक शक्तियां मिलकर तनाव कम करने और वार्ता का रास्ता अपनाने पर जोर देती हैं, तो यह पूरी दुनिया के लिए सकारात्मक संकेत हो सकता है। मध्य-पूर्व पहले ही कई दशकों से संघर्ष और अस्थिरता का केंद्र रहा है, इसलिए एक और बड़े युद्ध से बचना अंतरराष्ट्रीय समुदाय की प्राथमिकता होनी चाहिए।

अमेरिका और ईरान के बीच बढ़ता तनाव वैश्विक राजनीति के लिए एक गंभीर चुनौती बन सकता है। लेकिन इस बार कई सहयोगी देशों की सतर्कता और दूरी यह संकेत देती है कि दुनिया शायद एक और बड़े युद्ध से बचना चाहती है। यदि कूटनीति को प्राथमिकता दी जाती है और संवाद के रास्ते खुले रहते हैं, तो संभव है कि यह संकट युद्ध में बदलने से पहले ही शांत हो जाए। आज की वैश्विक व्यवस्था में किसी भी बड़े संघर्ष का प्रभाव पूरी दुनिया पर पड़ता है। इसलिए यह आवश्यक है कि शक्तिशाली राष्ट्र युद्ध के बजाय सहयोग, बातचीत और शांति की दिशा में कदम बढ़ाएं। तभी विश्व वास्तव में स्थिर और सुरक्षित बन सकता है।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

मुख्यमंत्री लाड़ली लक्ष्मी योजना : मंशा बड़ी, ज़मीनी क्रियान्वयन क्यों पिछड़ा ?

मध्यप्रदेश सरकार की महत्वाकांक्षी योजनाओं में मुख्यमंत्री लाड़ली लक्ष्मी योजना को विशेष स्थान प्राप्त है। इस योजना की शुरुआत बालिकाओं के जन्म को प्रोत्साहित करने, उनके पालन-पोषण, शिक्षा और भविष्य को सुरक्षित बनाने के उद्देश्य से की गई थी। सरकार की मंशा स्पष्ट रही है कि बेटियों को सामाजिक-आर्थिक सुरक्षा मिले और परिवारों में बालिकाओं के प्रति सकारात्मक सोच विकसित हो। वर्षों से इस योजना को सरकार की 'ड्रीम योजना' के रूप में प्रचारित किया जाता रहा है।

हालाँकि हाल के आँकड़े यह संकेत दे रहे हैं कि जिस गति और गंभीरता के साथ इस योजना का क्रियान्वयन होना चाहिए था, वह कई जिलों में दिखाई नहीं दे रहा है। कई बार की चेतावनी और समीक्षा बैठकों के बावजूद प्रदेश के 32 जिलों में योजना का पंजीयन लक्ष्य से काफी पीछे चल रहा है। यह स्थिति न केवल प्रशासनिक कार्यप्रणाली पर सवाल उठाती है, बल्कि यह भी सोचने पर मजबूर करती है कि आखिर इतनी महत्वपूर्ण योजना ज़मीनी स्तर पर अपेक्षित परिणाम क्यों नहीं दे पा रही है।

मुख्यमंत्री लाड़ली लक्ष्मी योजना का मूल उद्देश्य समाज में बेटियों के प्रति सकारात्मक वातावरण तैयार करना है। इसके तहत बालिका के जन्म से लेकर उसकी शिक्षा और विवाह तक आर्थिक सहायता प्रदान करने की व्यवस्था है। योजना के अंतर्गत बालिका के नाम पर सरकार चरणबद्ध तरीके से राशि निवेश करती है, जिससे भविष्य में उसे उच्च शिक्षा या अन्य आवश्यकताओं के लिए आर्थिक सहारा मिल सके।

इस योजना ने कई परिवारों में बेटियों को लेकर सोच में सकारात्मक बदलाव भी लाया है। ग्रामीण और आर्थिक रूप से कमजोर परिवारों में यह योजना बेटियों के लिए सुरक्षा कवच के रूप में देखी जाती है। यही कारण है कि इसे राज्य सरकार की सबसे लोकप्रिय सामाजिक योजनाओं में से एक माना जाता है। प्रदेश के कई जिलों में इस योजना का पंजीयन अपेक्षित स्तर तक नहीं पहुँच पाया है। जानकारी के अनुसार 11 महीने बीत जाने के बाद भी कई जिलों में पंजीयन का प्रतिशत 80 प्रतिशत तक भी नहीं पहुँच पाया है।

कुछ जिलों की स्थिति विशेष रूप से चिंताजनक है। उदाहरण के तौर पर सिंगरौली में पंजीयन मात्र 57 प्रतिशत तक सीमित है। निवाड़ी में यह आँकड़ा 66 प्रतिशत है, जबकि शिवपुरी में 69 से 70 प्रतिशत के बीच पंजीयन दर्ज किया गया है। इसी तरह मऊगंज में 72 प्रतिशत, अलीराजपुर में 72 प्रतिशत, धार में 73 प्रतिशत, झाबुआ में 73 प्रतिशत, रीवा में 73 प्रतिशत और शहडोल में भी लगभग 73 प्रतिशत तक ही पंजीयन हो पाया है।

यह स्थिति इसलिए भी चर्चा का विषय बन गई है क्योंकि इनमें से कई जिलों में महिला कलेक्टर पदस्थ हैं। सामान्यत: यह अपेक्षा की जाती है कि महिला नेतृत्व में बालिका हित से जुड़ी योजनाओं का क्रियान्वयन और अधिक प्रभावी ढंग से होगा, लेकिन आँकड़े बताते हैं कि प्रशासनिक प्रयास अपेक्षित स्तर तक नहीं पहुँच पाए हैं।

केवल यही जिले नहीं, बल्कि प्रदेश के कई अन्य जिलों में भी योजना की प्रगति सरकार की मंशा के अनुरूप नहीं दिखाई दे रही है। डिंडोरी, खंडवा, बुरहानपुर, अनूपपुर, रतलाम, पन्ना, मंडला, अशोकनगर, बैतूल, सीधी, गुना, मुरैना, खरगोन, छिंदवाड़ा, टीकमगढ़, नीमच, छतरपुर, भोपाल, कटनी, भिंड और राजगढ़ जैसे जिलों में भी लक्ष्य की तुलना में पंजीयन काफी पीछे बताया जा रहा है।

जब राज्य की एक प्रमुख योजना में इतनी बड़ी संख्या में जिले लक्ष्य से पीछे हों, तो यह केवल स्थानीय स्तर की समस्या नहीं बल्कि व्यापक प्रशासनिक चुनौती का संकेत देता है।

सूत्रों के अनुसार योजना की धीमी प्रगति को लेकर कई बार समीक्षा बैठकें आयोजित की गईं और अधिकारियों को चेतावनी भी दी गई। सरकार की ओर से स्पष्ट निर्देश दिए गए कि पंजीयन प्रक्रिया को तेज किया जाए और अधिक से अधिक पात्र बालिकाओं को योजना से जोड़ा जाए।

इसके बावजूद कई जिलों में स्थिति में अपेक्षित सुधार नहीं दिखाई दे रहा है। इससे यह सवाल उठने लगा है कि क्या केवल निर्देश और चेतावनी पर्याप्त हैं, या फिर ज़मीनी स्तर पर निगरानी और जवाबदेही की व्यवस्था को और मजबूत करने की आवश्यकता है।

योजना के धीमे क्रियान्वयन के पीछे कई कारण हो सकते हैं। सबसे प्रमुख कारण जागरूकता की कमी माना जाता है। ग्रामीण क्षेत्रों में अभी भी कई परिवार योजना की पात्रता और प्रक्रिया से पूरी तरह परिचित नहीं हैं। दूसरा कारण प्रशासनिक प्रक्रियाओं की जटिलता भी हो सकता है। कई बार दस्तावेज़ों की कमी, ऑनलाइन पंजीयन में तकनीकी समस्याएँ या आंगनवाड़ी और पंचायत स्तर पर समन्वय की कमी के कारण भी पंजीयन प्रक्रिया धीमी हो जाती है।

इसके अलावा कुछ स्थानों पर कर्मचारियों की कमी या कार्यभार अधिक होने के कारण भी योजना पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जा पाता।

यदि सरकार वास्तव में इस योजना को अपने उद्देश्य के अनुरूप सफल बनाना चाहती है, तो कुछ ठोस कदम उठाने की आवश्यकता है। सबसे पहले जिला स्तर पर नियमित मॉनिटरिंग और जवाबदेही तय की जानी चाहिए। जिन जिलों में प्रगति धीमी है, वहाँ विशेष अभियान चलाकर पंजीयन बढ़ाने की जरूरत है।

दूसरा महत्वपूर्ण कदम व्यापक जनजागरूकता अभियान है। आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं, आशा कार्यकर्ताओं और पंचायत प्रतिनिधियों की मदद से गांव-गांव तक योजना की जानकारी पहुँचाई जा सकती है। इसके साथ ही पंजीयन प्रक्रिया को सरल और तकनीकी रूप से अधिक सुगम बनाया जाना भी आवश्यक है, ताकि पात्र परिवार बिना किसी परेशानी के अपनी बालिकाओं का पंजीयन करा सकें। मुख्यमंत्री लाड़ली लक्ष्मी योजना न केवल एक सरकारी योजना है, बल्कि यह समाज में बेटियों के सम्मान और सुरक्षा का प्रतीक भी है। सरकार की मंशा स्पष्ट है कि हर बालिका को बेहतर भविष्य का अवसर मिले।

लेकिन जब प्रदेश के कई जिलों में योजना का क्रियान्वयन लक्ष्य से पीछे हो, तो यह चिंता का विषय बन जाता है। यदि प्रशासनिक तंत्र समय रहते सक्रिय नहीं हुआ, तो इस महत्वाकांक्षी योजना का प्रभाव सीमित हो सकता है। इसलिए जरूरी है कि सरकार, प्रशासन और समाज मिलकर यह सुनिश्चित करें कि कोई भी पात्र बालिका इस योजना से वंचित न रहे। तभी लाड़ली लक्ष्मी योजना वास्तव में अपने उद्देश्य को पूरा कर पाएगी और प्रदेश की बेटियों का भविष्य सुरक्षित बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगी।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)